कुमार रवीन्द्र

गीत अपना है अधूरा

दर असल
यह गीत अपना है अधूरा

चाहते थे
रंग सारे भोर के इसमें संजोएं
और पूनों की जुन्हाई से
इसे पूरा भिगोएं

बहुत जांचा
बहुत परखा
शब्द हमको मिला कोई नहीं पूरा

सोचते थे–गीत अपना
कोई तो बन जाये शंकर
किन्तु उपजे भाव सारे
जो रहे हैं वर्णशंकर

व्यंजना को
बहुत टेरा
किन्तु आया अर्थ जो, निकला जमूरा

एक भीतर गीत रहता
वह कभी हम लिख न पाये
जो अधूरे और जूठे
राग वे ही गये गाये

लगा पहले
अमृतफल था
किन्तु अब तो लग रहा यह भी धतूरा।

तुम हमसे आकाश मांगना

जब भी तुम्हें
धूप की, सुनो जरूरत हो
तुम हमसे आकाश मांगना

खुला हुआ आकाश
हमारे पुरखों का है
पास हमारे
वह आकाश
नहीं गिरवी रक्खा है हमने
राज–दुआरे

जोत वहीं से
ले जाकर तुम अपने घर में
हां, उजली कंदील टांगना

कैसे तुम्हें रही आदत
रहने की
घुप अंधियारे में
सब अंधे हैं
कौन बताए तुम्हें
उजाले के बारे में

और तुम्हारे घर में भी तो
कहीं नहीं है
खुला–खुला सा कोई अंगना

यह भी सच है
अंधे होकर जीने का सुख
अलग किसिम का
तुम्हें याद है
मंत्र एक ही
चालिस चोरों के सिमसिम का

लक्ष्मणरेखा अंधियारे की
उसको सीखा
तुमने, भंते, नहीं लांघना।

सम्पर्क–
क्षितिज, 310
अर्बन एस्टेट–2,
हिसार (हरियाणा)